आपस में जुड़े हुए अधिकार - आवास से लेकर स्वास्थ्य और सकुशल रहने तक

(अजय माकन व अन्य बनाम भारत संघ मामले में दिए गए फ़ैसले पर आधारित)

(2019) 260 DLT 581 (DB)

एक मानवीय त्रासदी

साल 2015 में दिल्ली में दिसंबर की एक बहुत सर्द रात में रेलवे मंत्रालय के उत्तर रेलवे के कई अधिकारी दिल्ली पुलिस के एक बड़े-से दल के साथ मादीपुर मेट्रो स्टेशन के क़रीब शकूर बस्ती (पश्चिम) पहुँचे. यहाँ मंत्रालय की ज़मीन पर एक झुग्गी झोंपड़ी बस्ती स्थित थी. सरकार और पुलिस की मशीनरी ने बस्ती की 1200 झुग्गियों को गिराना शुरू किया, जिससे क़रीब 5000 लोग बेघर हो गए...

यह कहानी इस बारे में है कि कैसे दिल्ली उच्च न्यायालय ने आवास के अधिकार से जुड़े मामलों के बारे में क़ानून स्थापित किए.

अदालत के दरवाज़े पर

अगले दिन दिल्ली उच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दाखिल की गई, जिसमें जबरन बेदख़ली से राहत की माँग की गई थी.

यह मामला रेलवे मंत्रालय, शहरी विकास मंत्रालय, राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली सरकार, दिल्ली पुलिस और दिल्ली अर्बन शेल्टर इम्प्रूवमेंट बोर्ड (डीयूएसआईबी) के ख़िलाफ़ दायर किया गया था.

याचिकाकर्ताओं ने कहा कि:

झुग्गी गिराने की यह कार्रवाई सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के कई फ़ैसलों का उल्लंघन करती है, और यह 7 फ़रवरी 2007 को नोटिफाई किए गए दिल्ली मास्टर प्लान 2021 का भी उल्लंघन है.

अदालत ने मार्च 2019 में अपना फ़ैसला सुनाया.

झुग्गी बस्ती तोड़े जाने और फ़ैसला सुनाए जाने के बीच के 39 महीनों की अवधि में वहाँ रहने वाले लोगों का क्या हुआ?

अदालत ने समन्वय और सहकार के निर्देश दिए

सुनवाई जैसे-जैसे आगे बढ़ी, अनेक हलफ़नामे दाख़िल किए गए और आदेश जारी हुए.

अदालत ने इसे साफ़ कर दिया था कि उसकी फ़ौरी प्राथमिकता विस्थापित हुए लोगों को राहत पहुँचाना और उनका पुनर्वास है, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि झुग्गी बस्ती की क़ानूनी स्थिति क्या थी. इस उद्देश्य से अदालत अनेक मोर्चों पर सक्रिय हुई:

सर्वेक्षण की कार्रवाई:

पहला सवाल इस बात को लेकर था कि क्या डीयूएसआईबी के तहत कोई सर्वेक्षण किया गया था. यह उजागर हुआ कि ऐसा कोई सर्वेक्षण नहीं किया गया था. अदालत ने निर्देश दिया कि फ़ौरी तौर पर झुग्गी बस्ती की आबादी का एक विस्तृत सर्वेक्षण किया जाए.

हर क़दम का ब्योरा:

अदालत ने इसके बाद रेलवे और दिल्ली पुलिस से बस्ती गिराने के लिए योजना का विस्तृत ब्योरा माँगा.

भोजन, दवाएँ और रोशनी:

अदालत ने निर्देश दिए कि विस्थापित हुए लोगों के लिए पर्याप्त भोजन, दवाएँ, रोशनी और शौचालय सुविधाएँ सुनिश्चित करने के लिए फ़ौरन इंतज़ाम किए जाएँ.

शिकायत सुनने की एक व्यवस्था:

अदालत ने डीयूएसआईबी को एक नोडल एजेंसी बनाया ताकि वह विस्थापित आबादी की शिकायतों और आग्रहों को सुने और अगर ज़रूरी हुआ तो सूचना को एजेंसियों और अदालत को मुहैया कराए ताकि फ़ौरी राहत मुहैया कराई जा सके.

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भागीदारी:

अदालत ने एनएचआरसी को भी इस मामले में जोड़ा और निर्देश दिए कि वह स्थल पर एक वरिष्ठ अधिकारी को तैनात करे और अदालत में एक रिपोर्ट दाख़िल करे.

ज़मीनी स्तर पर ऐसी व्यवस्था क़ायम करने के बाद अदालत ने अपने सामने लाई गई समस्या के विभिन्न आयामों पर गहराई से गौर करना शुरू किया.

आंकड़े

शुरुआत करते हुए अदालत ने दिल्ली में झुग्गियों में रहने वाली आबादी संबंधी आंकड़ों का रुख़ किया ताकि झुग्गियों को जबरन गिराने और उन्हें बेदख़ल करने की कार्रवाइयों के संदर्भ को समझा जा सके. अदालत ने इसी पृष्ठभूमि के तहत यह निर्धारित किया इस मामले में क़ानूनी मुद्दे क्या थे.

इसने सरकारी रिपोर्टों पर गौर करते हुए यह पाया कि भारत के शहरों में क़रीब 8 करोड़ लोग झुग्गियों में रहते हैं, जिनमें से 3% दिल्ली में हैं. राष्ट्रीय सैंपल सर्वे ऑफिस (एनएसएसओ) के 2012 सर्वेक्षण ने झुग्गी बस्तियों में बुनियादी संसाधनों के भारी अभाव को उजागर किया - क़रीब 80-85% झुग्गी बस्तियों में साफ़ पेयजल, भूमिगत सीवरेज व्यवस्था और स्वास्थ्य केंद्रों/सरकारी अस्पतालों तक पहुँच तथा बच्चों के लिए शैक्षणिक संस्थानों तक पहुँच का अभाव था.

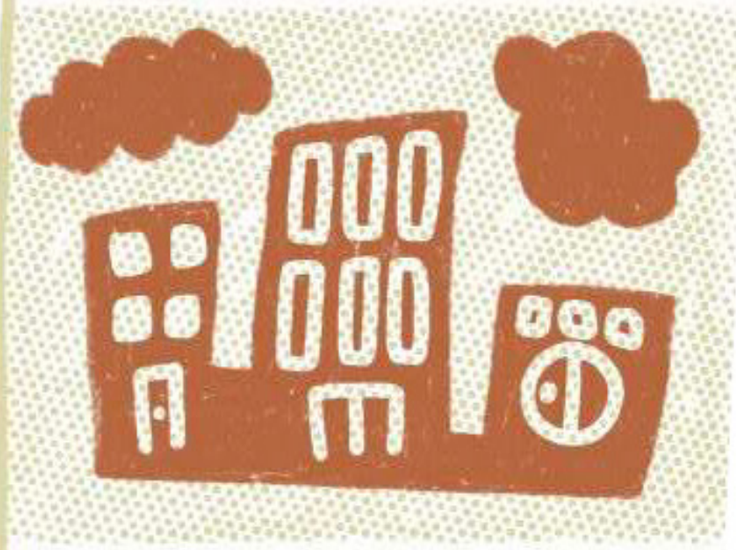

अदालत ने इंटरनेशनल कोवेनेन्ट ऑन सिविल एंड पोलिटिकल राइट्स (आईसीसीपीआर) और इंटरनेशनल कोवेनेन्ट ऑन इकोनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स (आईसीईएससीआर) पर गौर किया. भारत इनमें एक भागीदार पक्ष है और इनको मानवाधिकार अधिनियम 1993 के ज़रिए भारत में लागू किया गया था. आईसीईएससीआर के अनुच्छेद 11 में यह ज़िम्मेदारी राज्य के ऊपर डाली गई है कि वह ऐसे कदम उठाए कि हरेक व्यक्ति को एक समुचित जीवन स्तर का अधिकार सुनिश्चित हो सके, जिसमें समुचित भोजन, आवास और जीवन स्थितियों में बेहतरी के अधिकार शामिल हैं.

इसके बाद अदालत ने आईसीईएससीआर के समुचित आवास के अधिकार पर जेनरल कमेंट नं. 4 को लिया जिसमें यह कहा गया है कि समुचित आवास के अधिकार का मतलब महज़ आश्रय नहीं हो सकता है - बल्कि यह सुरक्षा, सम्मान और शांति से जीने का अधिकार है. आवास का अधिकार बुनियादी सेवाओं तक पहुँच और उनकी उपलब्धता जैसे दूसरे मानवाधिकारों के साकार होने से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है.

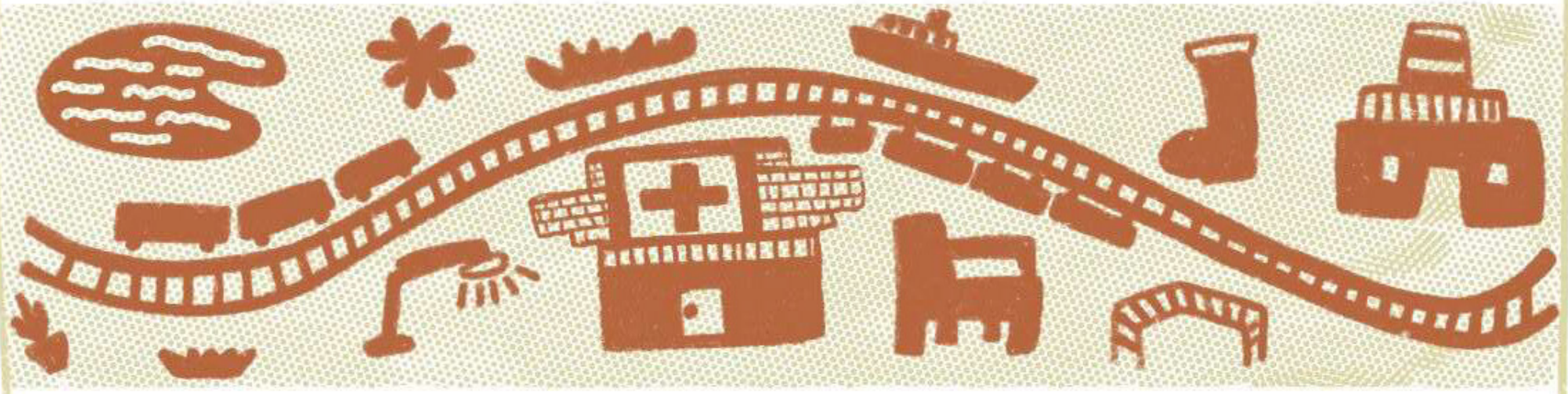

शहर पर एक अधिकार: सामाजिक एकजुटता का निर्माण

इसके बाद अदालत ने शहर पर अधिकार की एक नई बनती हुई अवधारणा पर गौर किया. इस अवधारणा का ज़िक्र करने का मक़सद यह दोहराना था कि झुग्गी-झोपड़ी बस्तियों में रहने वाले लोग शहर के सामाजिक और आर्थिक जीवन के समान भागीदार हैं और इसमें योगदान देते हैं. इसमें सफ़ाई कर्मी, कूड़ा उठाने वाले, घरेलू मज़दूर, सार्वजनिक परिवहन चालक, मज़दूर और सेवा प्रदाताओं की एक व्यापक शृंखला है जिनके बिना शहर का काम नहीं चल सकता है. इस आबादी की आवास ज़रूरतों को प्राथमिकता देना किसी भी ऐसे राज्य के लिए ज़रूरी होना चाहिए जो सामाजिक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हो

2016 में यूनाइटेड नेशंस कॉन्फ्रेंस ऑन हाउसिंग एंड सस्टेनेबल अर्बन डेवेलपमेंट (हैबिटैट III) में सदस्य राज्यों द्वारा अपनाया गया न्यू अर्बन एजेंडा 'शहर पर अधिकार' को परिभाषित करते हुए कहता है कि यह:

"वर्तमान और भविष्य के सभी निवासियों द्वारा न्यायसंगत, समावेशी और टिकाऊ शहरों में बसने, उन्हें उपयोग में लाने और उत्पादित करने का अधिकार है, जिसे जीवन की गुणवत्ता के लिए एक बुनियादी ज़रूरत के रूप में सबके साझे हित के रूप में परिभाषित किया गया है. शहर पर अधिकार सरकारों और जनता पर यह ज़िम्मेदारियाँ भी डालता है कि वे इस अधिकार को अमल में लाएँ, इसकी रक्षा करें और इसको प्रोत्साहित करें."

इस एजेंडे के साथ जुड़ा हुआ एक पॉलिसी पेपर उन घटकों की एक सूची पेश करता है जो सुनिश्चित करते हैं कि "शहर सबका साझा हित" बनें - (क) भेदभाव से मुक्त नीतियाँ, (ख) समावेशी नागरिकता, (ग) आश्रय, स्वास्थ्य, वस्तुओं और सेवाओं तक सबकी न्यायसंगत पहुँच, (घ) सार्वजनिक जगहों की समानता, (च) लैंगिक समानता, (छ) समावेशी अर्थव्यवस्थाएँ, व अन्य.

शहर पर एक अधिकार: सामाजिक एकजुटता का निर्माण

भारत के संविधान में सीधे-सीधे आवास के अधिकार की बात नहीं कही गई है. इसके बावजूद, अदालत ने फ़ैसला दिया कि संविधान हरेक व्यक्ति के, और ख़ास कर हाशिए के समूहों के, सामाजिक और आर्थिक अधिकारों की रक्षा करता है. संविधान में ऐसा किस तरह किया गया है?

प्रस्तावना में सामाजिक न्याय और व्यक्तियों की मर्यादा की गारंटी की गई है.

संविधान समानता के अधिकार (अनुच्छेद 14), गतिविधि की आज़ादी (19(1)(d)), देश में कहीं भी निवास करने की आज़ादी (19(1)(e)) और अपना पेशा, व्यापार या व्यवसाय को चलाने की आज़ादी (19(1)(g)) की गारंटी करता है.

कई फ़ैसलों में जीवन के अधिकार (अनुच्छेद 21) की व्याख्या करते हुए उसमें सम्मानपूर्वक जीने के अधिकार को भी शामिल किया गया है, जिसमें समुचित पोषण, वस्त्र, और आश्रय आदि जैसी बुनियादी ज़रूरतों तक पहुँच शामिल है

भाग चार में राज्य के नीति-निर्देशक तत्व केंद्र और राज्य सरकारों पर यह ज़िम्मेदारी डालते हैं कि वे काम, शिक्षा और मातृत्व राहत के अधिकारों को साकार करें.

ऊपर बताए गए तत्वों को ***ओल्गा टेलिस बनाम बंबई म्युनिसिपल कॉरपोरेशन (1987) 3 SCC 545*** में उद्धृत किया गया था, जिसमें बंबई में सड़कों के किनारे रहनेवाले लोगों को जबरन उजाड़ने की सुनवाई की गई थी. अदालत ने फ़ैसला किया था कि वे सभी सामाजिक और आर्थिक अधिकार और हक़दारियाँ जो जीवन को जीने के लायक़ बनाती हैं, जीवन के अधिकार का हिस्सा हैं

विशेष विचार...

अदालत ने समुचित आवास के अधिकार को जहाँ संविधान पर आधारित किया, वहीं इसने अपने एक पुराने फ़ैसले का हवाला भी दिया. *सुदामा सिंह बनाम दिल्ली सरकार (2010) 168 DLT 218* के इस फ़ैसले में दिल्ली में झुग्गी बस्तियों को गिराए जाने के मुद्दे पर ही विचार किया गया था.

इसलिए अदालत का सुदामा सिंह फ़ैसला आज दिल्ली में झुग्गी बस्तियों और झुग्गी निवासियों के मामलों पर लागू होने वाला क़ानून है. इसमें अधिकारियों के लिए उन प्रक्रियाओं की रूप-रेखा दी गई है, जिनका पालन उन्हें करना होगा अगर वे झुग्गी-निवासियों को विस्थापित करने का प्रस्ताव रखें - चाहे यह कार्रवाई सरकारी ज़मीन पर स्थित झुग्गियों के ख़िलाफ़ ही क्यों न की जा रही हो. यह रूप-रेखा दिल्ली स्लम एंड जेजे रिहैबिलिटेशन एंड रिलोकेशन पॉलिसी 2015 के मूल्यांकन का आधार बन गई

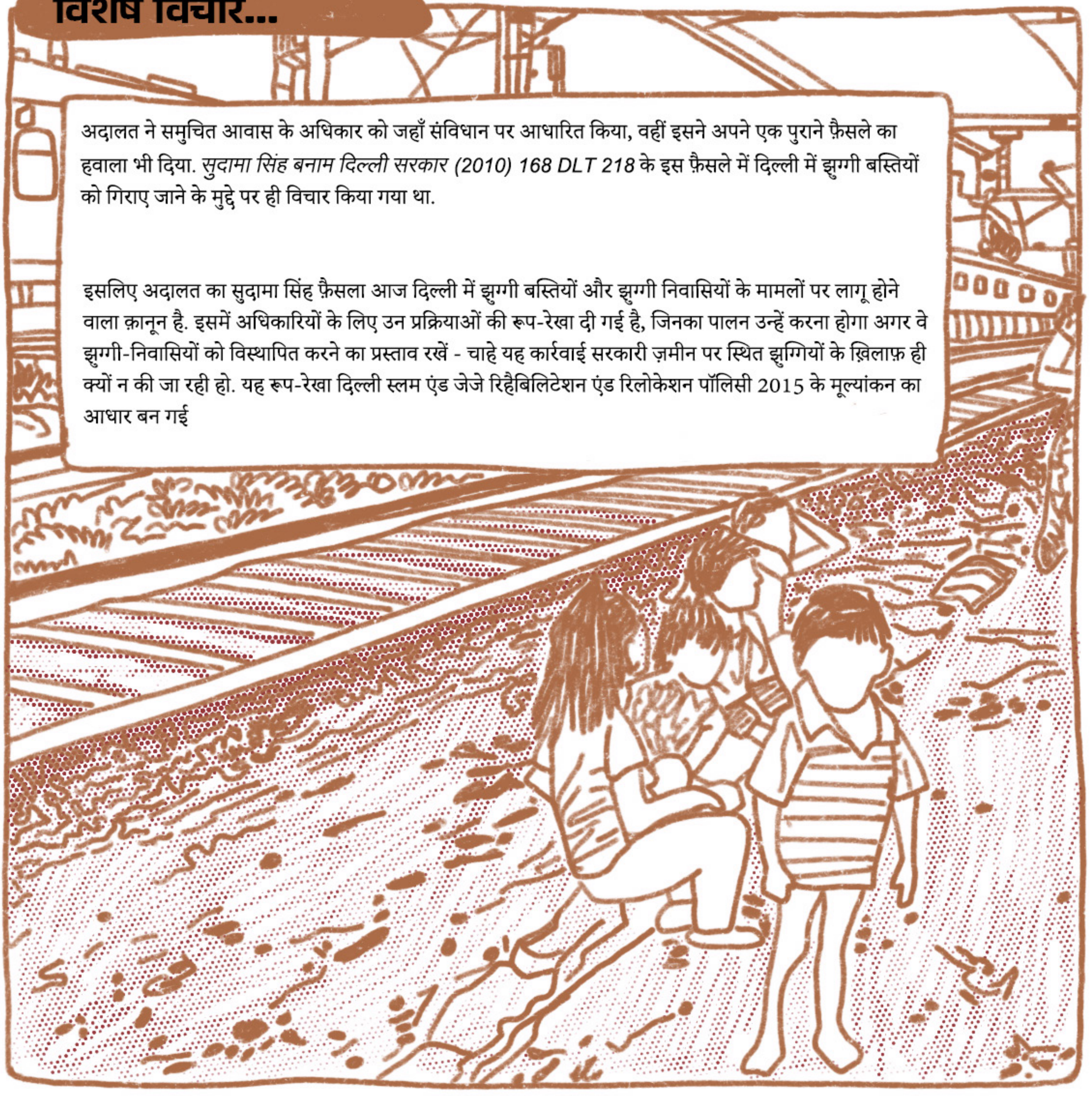

अदालत का फैसला

"आवास का अधिकार अधिकारों का एक समूह है और यह किसी के सिर के ऊपर सिर्फ़ आश्रय होने भर तक सीमित नहीं है. इसमें आजीविका का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, शिक्षा का अधिकार और भोजन का अधिकार शामिल है, इसमें साफ़ पेयजल, सीवेज, और परिवहन सुविधाओं का अधिकार भी आता है."

अपने निष्कर्ष में अदालत ने कहा कि:

अब यह एक स्थापित क़ानून है कि अदालतें एक ऐसे संकीर्ण नज़रिए को हतोत्साहित करती हैं जिसमें झुग्गी-झोंपड़ी बस्ती के किसी निवासी को एक 'अधिकारविहीन ग़ैरक़ानूनी क़ब्ज़ा करने वाले' के रूप में देखा जाता है. वे ऐसे व्यक्तियों को ऐसे लोगों के रूप में देखती हैं जिनके व्यापक संवैधानिक अधिकार हैं, जिनकी रक्षा करनी है और जिन पर अमल करना ज़रूरी है.

क़ानून आदेश देता है कि अगर अदालतों में लोग दस्तक देते हुए जबरन झुग्गी बस्ती गिराए जाने और बेदख़ली की शिकायत करें तो उन्हें ज़मीन पर 'अवैध अतिक्रमणकारी' के रूप में न देखा जाए, चाहे ज़मीन सार्वजनिक हो या निजी, बल्कि ऐसे में अदालत एजेंसियों को पहले एक सर्वेक्षण करने का निर्देश दे ताकि यह तय किया जा सके कि निवासी मौजूदा क़ानून और नीति के तहत पुनर्वास के हक़दार हैं या नहीं. घोषणा किए बिना, और दूसरी एजेंसियों के साथ समन्वय किए बिना, ऊपर बताए गए कदमों का पालन नहीं करते हुए, झुग्गी निवासियों की जबरन बेदख़ली, क़ानून के ख़िलाफ़ है.

ज़मीन का मालिकाना रखने वाली एजेंसियों के लिए अनिवार्य है कि वे पहले सर्वेक्षण करें और शकूर बस्ती झुग्गी निवासियों से और प्रस्तावित झुग्गी तोड़े जाने से प्रभावित होने वाले अन्य लोगों से मशविरा करें. अगर पात्रता रखने वाले निवासियों का मौक़े पर पुनर्वास व्यावहारिक न हो, तब जवाबदाता सरकारी एजेंसियाँ उनका जब भी कहीं और पुनर्वास करने की स्थिति में हों, उसी के मुताबिक़ निवासियों को समुचित समय दिया जाएगा ताकि वे नई जगह पर जाकर बसने का इंतज़ाम कर सकें. तब तक, बेदख़ली की कोई भी फ़ौरी गुंजाइश नहीं होगी.

...